Shri Devi Mahalasa Prasanna

सितम्बर–अक्तुबर–नवम्बर–97 अंक–1

2016.05.0276

रंगमाया और फिल्ममाया

सांस्कृतिक पत्रिका जो स्वतंत्र भारतवासियों के आवाज़ों की प्रतिध्वनि है।

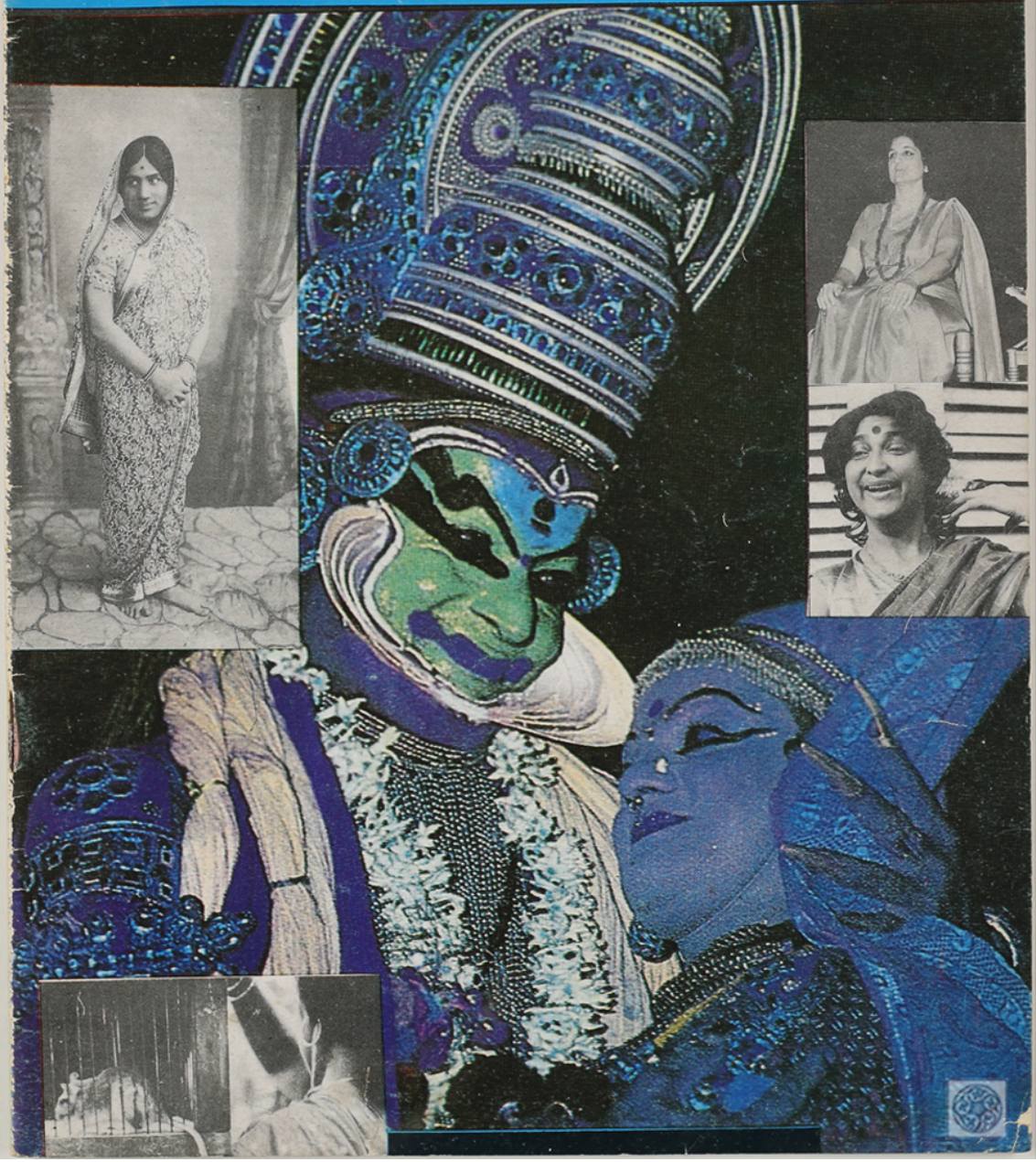

स्वगत-प्रकट

"क्यों उकसाये गिरीश कर्नाड़ कृत 'हयवदन' बार-बार मुझे ? . . . ."

□ प्रदीप चं० वेर्णेकर

गिरीश कर्नाड़ मेरे चहेते नाटककार। मेरा उनसे परिचय कब, क्यों हुआ यह अच्छी तरह से मालूम नहीं। बल्कि इतना ज़रूर लग रहा है कि, मेरा वह परिचय भाग्य का एक संकेत ही था।

कई साल पहले अचानक मराठी साप्ताहिक पत्रिका 'माणूस' मेरे हाथ लगी। मुखपृष्ठ पर ही कर्नाड़ का कृष्ण-धवल छायाचित्र दिखा। पत्रिका के अंतर्पृष्ठों पर उनके बारे में लिखा हुआ साक्षात्कार साम्मिलित लेख जब पढ़ा, तब यकायक इस कलासक्त एवं बुद्धिमान व्यक्ति के बारे में एक प्रकार का आदर प्रस्फुटित हुआ।

कुछ अर्से बाद, जब मैं गुरुवर्य इब्राहिम अल्काझी के राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय में 'नाटक-रंगमंच' विषयक अध्ययन करने हेतु दाखिल हुआ, तब कर्नाड़ के तीन समकालीन नाटक *'ययाति', 'तुगलक', 'हयवदन'* का अध्ययन करने का सुयोग प्राप्त हुआ। फलस्वरूप इन नाटकों ने अन्य कई रंगकर्मियों की तरह मुझे भी झकझोर के छोड़ा होगा। यह कारण भला सतही रहा हो, लेकिन 'हयवदन' के बहुत सारे तत्वों ने मुझे आकर्षित किया ; और वास्तव में इस नाटक से मुझे पूर्णतया लगाव हो गया।

विशेषकर 'हयवदन' का कथ्य, कथा-वस्तु, शैली, आकृतिबंध और एक पुराणकथा को कर्नाड़ ने जो समसामयिक, सार्वभौमिक संदर्भ लगाये ; वे अपने आप में तो सुरुचिपूर्ण लगे ही, साथ में रुचिवर्धक भी।

भारतीय संस्कृति एवं लोककला ये मेरे प्रिय विषयों में से हैं। मैंने पाया 'हयवदन' में उपरोक्त बातों के धागे बहुत ही रोचक ढंग से बुने हुए हैं।

बचपन में माँ-मौसी की गोदी में बैठकर देखे गोवा-कोंकण के *दशावतारी खेल, ग्वालन-काला* इनमें से बहुत सारे नाट्य-संकेतों के अर्थ समझ नहीं पाता था। बढ़ती उम्र, अनुभवों के साथ-साथ यह मेरी समझ के परे के तत्व अपनी पहचान, स्वरूप दिखाने लगे। और मैंने पाया कि, मंदिरों के मुक्तांगनों में बैठे नाटक की अलौकिक दुनियाँ में खोये हुए दर्शक-गण से आत्मियता बनाये रखने वाले देव-देवताओं के, राजा-महाराजाओं के *मुखौटे*, वीर या शापित पात्रों के प्रवेश-प्रस्थान के लिए प्रयोग में लाई जाने वाली *रंगपटियाँ*, झूठ-मूठ की

श्री गिरीश कर्नाड़ के मूल कन्नड़ नाटक *'हयवदन'* की गोवा हिन्दु एसोसिएशन के लिए **श्रीमती विजय मेहता** के निर्देशन में चर्चित मंचन का एक दृश्य।

शैलीबद्ध *लड़ाई*, इन तमाम बातों में छुपा हुआ वह जादू . . . वे सुप्त सामर्थ्य मेरे मन को लुभाने लगे। कर्नाड़ के 'हयवदन' ने इस सुंदर सत्य को मेरे सामने ला छोड़ा।

मैं अन्य सच्चे भारतीय की तरह अपने आप को भारतीय समझता हूँ। जन्म, कर्म, धर्म, मरण आदि-आदि बातों के मामले में भी। एक सही मायने में भारतीय नाटक 'हयवदन' मैंने चुना और अपने आप को आज तक उससे बंधा हुआ पाया।

"नाटक नहीं होता, तो मैं पागल बन जाता। ज़िंदगी की संघर्षभरी राहों में चलते-चलते इस माध्यम ने ही मुझे धीरज बंधाया है। एकांत में फूट-फूटकर रोने का धीरज बंधाया है। अंतर्मुख बनकर आत्मचिंतन करने का अभ्यास रंगमंच ने ही सिखाया है।"

रंगमंचीय प्रस्तुति के लिये अपने यहाँ मौलिक नाटक नहीं हैं, यूँ सोचने की हमारी प्रवृति भी घातक है। मुझे लगता है 'हयवदन' जैसे आधुनिक गौरव नाटक का बार-बार अध्ययन करना चाहिए। ऐसे नाटकों में ही नए संदर्भ, नए गहरे अर्थ, नई पहचान मुझे मिलती रही है। ऐसे समय में अस्वस्थ हो गया हूँ। नाटक की अभिजातता स्थल-काल की कड़ियाँ तोड़कर नये रंग, नया आभूषण, नया शृंगार, नई मुस्कान, नया मोह, नई खुशी, नया संदेशा लेकर आती है। ऐसे वक्त मैं अस्वस्थ हो जाता हूँ। मेरी यह अस्वस्थता मेरे इर्द-गिर्द के लोगों तक, दोस्तों तक पहुँचाने की एक प्रगाढ़ इच्छा उत्पन्न होती है। 'हयवदन' के साथ बार-बार यह होता आया है। मेरी अन्य प्रस्तुतियों के साथ भी यह अस्वस्थता का दौर आ सकता है।

कलाकार याने क्या ?' यह सवाल मैंने बार-बार अपने आप से पूछा है। मुझे इसका समाधान-कारक उत्तर नहीं मिल पाया। एक कलाकार कला-निर्मिती करता है, यही उसकी सीधी-साधी परिकल्पना हो तो सकती है।

सामाजिक, आर्थिक, राजकीय, सांस्कृतिक परिवेश से मेरा बार-बार संबंध आता तो होगा। ऐसे संबंधों से मैं अस्वस्थ भी हो जाता हूँ। कभी-कभी बेशुमार प्रभावित भी। फिर वे अस्वस्थ करने वाले या प्रभावित करने वाले प्रश्न याने किसी रस्मों-रिवाजों की समस्या हो सकती है, या तो फिर महात्मा ज्योतिबा फुले ने हरि जन जमात को जिसमें से पानी मिला या हो उस बावडी की कहानी हो सकती है। किसी नाव-दुर्घटना से जूझते हुए मेरे भाई-बहनों के संघर्ष की, या फिर मैंने स्वयं ने बहुत पहले कभी पढ़ी, और अब फिर एक बार समसामायिक संदर्भ के साथ पुकारने वाली 'सुखी आदमी की कमीज़' की कहानी हो सकती है।

इन तमाम बातों का मेरे सृजनशील मन पर जो असर होता है, वह एक अस्वस्थता के साथ मुझे सताता रहता है। तब कहीं मैं अभिव्यक्ति के लिए उस कहानी की एक कलाकृति गढ़ता हूँ। जब भी मेरी अस्वस्थता, मेरे हर्ष-उन्माद विचार जगाने वाले हैं, इस बात का मुझे एहसास होता है, तब तो फिर मैं कलाकार हूँ इस बात की मुझे खुशी होती है। कर्नाड़ के 'हयवदन' ने मुझे मेरे कलाकार होने का विश्वास बार-बार दिलाया है।

'हयवदन' एक पुराना नाटक मैंने बार-बार प्रस्तुत किया, इसका एक कारण भी यही रहा होगा। आश्चर्य न हो कि यही एक नाटक मैंने आठ सालों में पाँच अलग-अलग संस्थाओं के लिए तीन बार मराठी और दो बार हिन्दी में प्रस्तुत किया है।

अनेक बार जो इस बात का उल्लेख मैंने अख़बारों में किया है, इस का कारण भी मेरी यह रंगमंच के प्रति 'कठोर प्रतिबद्धता' ही है।

नाटक नहीं होता, तो मैं पागल बन जाता। ज़िंदगी की संघर्षभरी राहों में चलते-चलते इस माध्यम ने ही मुझे धीरज बंधाया है। एकांत में फूट-फूटकर रोने का धीरज बंधाया है। अंतर्मुख बनकर आत्मचिंतन करने का अभ्यास रंगमंच ने ही सिखाया है। मैं, शुरू में मंदिर रंगमंच का शौकिया कलाकार . . . रंगमंच पर जब मैंने पहला कदम रखा होगा, और जब दर्शकों की भीड़ ने किरदार की सराहना की होगी, तभी जाकर कहीं इस माध्यम के रोमांच से परिचय होकर मेरे कलाकार मन में शोक का ज्वार-सा उमड़ आया होगा।

शुरू में तो मैं ऐसे नाटक भी करता रहा था जो मेरे जीवन के प्रत्यक्ष करीब न थे। आज मुझे इन यादों के मारे तो शरम आती है। दर्शकों से बढ़ावा मिला, इसीलिये मैं कैसे क्यों अपने आपको स्तुति के लायक समझने लगा ?

मुझसे कोई पूछे कि, नाटक कौन-सा उठाया जाये, तो मैं आज यही कहूँगा कि जिस नाटक में इर्द-गिर्द के समाज को विचार प्रवर्तक ऐसा कुछ देने वाला तत्व मौजूद हो, वही नाटक उठाना चाहिए। उसमें फिर नीति की बात हो, राजकीय विचार हो, संस्कृति की बात हो। कर्नाड़ का 'हयवदन' मेरे सामने इन बातों का भंडार खोलता रहता है। इसीलिए ही तो मैं मेरी नाट्यकृति की पुनर्निर्मिती करता हूँ।

'हयवदन' में मुझे जिस ढंग से, जिस तैयारी से, जिस शानो-शौकत से जो बात कहनी थी, वह मैं नही कह पाया था। इस प्रकार से मेरे अंदर के कलाकार की भूख कैसे भला मिट पायेगी ? और जब मिट भी नहीं सकती, तब मैं एक प्रस्तुति के एक ही जगह एक प्रदर्शन से कैसे भला संतुष्ट रहूँ ? दुबारा मूल्यमापन कैसे भला न करूँ ?

बैसे तो नाटक समाज से अलग नहीं हो सकता है। कहूँ तो 'नाटक-रंगमंच' मुझे सामाजिक, नैतिक महत्तता का गहरा परिचय भी कराता है। इस प्रकार के वैयक्तिक, आध्यात्मिक, परिचय से गुजरते वक्त अस्वस्थ कलाकार के मन की अभिव्यक्ति घुटन भी महसूस नहीं करती है। इसीलिए 'नाटक' यह केवल कला न रहते हुए जीने की वह एक जिद्द बन जाती है। फिर उस जिद्द के लिए अनचाहे, झंझट, अनचाही चुनौतियाँ, मनचाहे कदम उठाने पड़ते हैं। वह एक ज़रूरत बन जाती है। इस प्रकार की प्रखर वैयक्तिक ज़रूरत से ही आगे चलकर कलाकार और समाज का रिश्ता गहरा बनता जाता है। मेरी पहली कलाकृतियों की तरह 'हयवदन' इन बातों से परे हटकर नहीं है।

'हयवदन' भी मेरी अन्य कलाकृतियों की तरह प्रतिरोध से ही प्रेरणा लेकर बार-बार उठा है। यह मेरा हमेशा कलाकार रहने का रहस्य है। मेरे अंदर का कलाकार ज्वालामुखी की तरह मानों दहकता रहता है—प्रतिरोध होते ही वह जैसे उफ़न उठता है। फिर वह राह ताके आर्थिक, सामाजिक, राजकीय चुनौतियों को तितर-बितर कर देता है।

मेरा अंदरूनी-बाहरी कलाकार जिस प्रकार से अप्रतिम समझौता कर सकता है, उसी प्रकार से तोड़-फोड़ भी कर सकता है। माध्यम की निष्ठा रचनात्मक प्रयासों का महत्व बताती रहती है। सांस्कृतिक घटनाओं में भ्रष्टाचार, गंदगी, आलस, असहकार मेरे बर्दाश्त से बाहर हैं। इसीलिए भी मेरे कई नाटकों को मैंने बड़े बदिस्त नाट्य-गृहों से छुड़ाकर छोटे-छोटे सभागृहों में बढ़िया ढंग से दर्शकों के लिए प्रस्तुत किये हैं।

मैंने ज़्यादातर मेरी प्रस्तुतियों में स्त्री की प्रधानता पायी है। स्त्री का शोषण, भ्रम निरास, प्यार, साहस मेरी कमजोरी हो सकती है। मैंने कई स्त्रियाँ—उनके अलग-अलग रूप करीब से देखे हैं। मेरी माँ, बहन, दादी माँ, प्रेमिका, पत्नी, पड़ोसन, कस्बों की स्त्रियाँ इन सब को देखकर प्यार, दया, श्रद्धा, करुणा की भावना उपजी है। स्त्रियाँ जिस ताक़त के साथ अपने आप को परिस्थितियों के साथ जोड़ने की कोशिश करती हैं, वह मुझ पर गहरा प्रभाव छोड़ती हैं। 'हयवदन' की 'पद्मिनी' का चरित्र भारतीय नाट्य-साहित्य में एक मील का पत्थर है।

" 'हयवदन' मैंने कुछ नाट्य-प्रतियोगिताओं में प्रस्तुत करके कभी नौ पुरस्कार प्राप्त किये। परंतु एक नाटक ने मुझे जो बार-बार उकसाकर मुझ कलाकार को कला-संस्कृति का मूल्य समझाया यह उन पुरस्कारों से कई गुना बढ़कर है। क्योंकि गिरिश कर्नाड़ का हयवदन यह नाटक भविष्य में भी समय का दायरा तोड़कर पुनर्जन्मही लेता रहेगा।

मुझे इंतज़ार है—फिर कब हयवदन मुझे उकसायेगा—इस बात का !" ❑